मनुष्य बनो

मा० मू०
१५.००

शरणागति

शुभ संकल्प

क्षमा.

प्रेम.

निष्काम कर्म.

ब्रह्मचर्य पालन.

क

याल फकीर चन्दजी महार

होशियारपुर (पंजाब

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टिकोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर, शिष्टाचार, सदाचार, सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल, सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायेगा।

४—किसी धर्म पन्थ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जांय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ-साफ अवश्य लिखना चाहिए। उत्तर के लिये जवाबीकार्ड आना चाहिए वी० पी०पी० के पत्रिका नहीं भेजी जायेगी। इसका वार्षिक मूल्य १५.०० है।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुंचे तो पहले अपने यहाँ डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर न मिले व अगला अंक निकलने के एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य भेजी जा सकेगी।

९—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजनी चाहिए। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ-साफ लिखना चाहिए। और पते की तबदीली भी।

—प्रकाशक

R. S.

ओ३म पूर्णमद पूर्णमिदः पूर्णात्पूर्णमुदच्यते
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

मनुष्य बनो

वर्ष ३७	मई, १९८९	अङ्क ८

नमस्कार

नमो सत्गुरुम् सच्चिदानन्द रूपम् ।
नमो अद्भुतम् अद्वितीयम् अनुपम ॥१॥

नहीं रूप कोई हैं सब रूप तेरे ।
तेरी सब ही प्रजा हैं और भूप तेरे ॥२॥

धरा सन्त अवतार जग को चिताया ।
दुःखी दीन को अंग अपने लगाया ॥३॥

दिया संग सन्त का मिला सत का जीवन ।
तेरे नाम पर शीश तन-मन है अर्पण ॥४॥

झुके राधास्वामी चरण हंसते-हंसते ।
तुझे कहते हैं सब नमस्ते-नमस्ते ॥५॥

॥ मनुष्य बनो ॥

मासिक सन्देश

मेरे परम प्रिय सत्संगियों !

राधास्वामी, परमदयाल जी सहाई ।

मार्च महीने के मासिक सन्देश में मैंने आपको सत्संग के दौरे के सम्बन्ध में ७ दिसम्बर १९८८ तक की सूचना दी ।

८ दिसम्बर १९८८ को देहली रूकने के बाद, मैं ९ दिस० को सांयकाल तक मानवता मन्दिर होशियारपुर पहुंच गया । मैं यहां पर यह बता देना चाहता हूँ कि विचार की शक्ति ही हमारे दुःख-सुख का कारण बनती है । जहाँ तक सत्संगियों का सम्बन्ध है जब कभी वे गुरू की आज्ञा का पालन करते हुए थोड़ी सी भी लापरवाही कर जाते है और अपनी बुद्धि लगाकर उसके द्वारा दिये गये आदेश में थोड़ा सा भी परिवर्तन कर देते हैं तो उनको कष्ट हो जाता है । उसका मूल कारण यह है कि सूक्ष्म रूप में वे अहंकारी हो जाते हैं । उन्हें यह पता भी नहीं होता कि वे अहंकार कर रहे हैं ।

सत्संगी तो क्या बड़े-बड़े सन्त और परम भक्त भी इस अहंकार का शिकार हो जाते हैं । इसलिये इस मार्ग पर चलने वाले के लिये कदम-कदम पर सतर्क रहना आवश्यक है ।

एक बार परमदयाल जी महाराज हैदराबाद नगर में जीप पर सवार होकर एक स्थान पर सत्संग देने के लिये जा रहे थे। उनकी जीप के आगे बैण्ड बाजे बज रहे थे। उनके गले में मालायें डाली जा रही थी और बहुत से सत्संगी जलूस के रूप में साथ-साथ चल रहे थे। जब उनका यह जलूस हैदराबाद नगर के चार मीनार चौक से गुजर रहा था, तो उन्होंने जीप को रुकवाया, तुरन्त नीचे उतर गये और उस चौक में ठहरे हुए एक फटे-पुराने कपड़े पहने हुए फकीर जैसे व्यक्ति के चरणों पर अपना सिर रख दिया। तुरन्त वे वापस अपनी सीट पर बैठ गये और जलूस सत्संग के स्थान की ओर रवाना हुआ।

परमदयाल जी महाराज के गुरू भाई आन्ध्र के सन्त हजूर नन्दू भाई जी महाराज उनके साथ ही जीप पर सवार थे। वे परमदयाल महाराज जी के इस व्यवहार को देखकर हैरान रह गये।

जब सत्संग के स्थान पर पहुँचे, तो नन्दू भाई जी महाराज ने अपने स्वाभाविक मधुर लहजे में परमदयाल जी से पूछा "महाराज ! क्या आपने उस फकीर में ईश्वर को देखा था ? क्योंकि आपनें जीप से उतर कर उसके चरणों में अपना सिर रख दिया था ? परमदयाल जी महाराज ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया "मेरे प्यारे नन्दू भाई जी ! मैंने उसमें ईश्वर को नहीं देखा। वास्तव में अपनी इज्जत, अफजाई और जलूस को देखकर यह शंका हुई कि कहीं मुझे यह अहंकार न हो जाय कि मैं कुछ बन गया हूं, मैंने उस अहंकार को तोड़ने के लिये उस अजनबी के चरणों में सिर रख दिया।" हजूर नन्दू

भाई जी महाराज उस उत्तर से मन्तुष्ट हो गये ।

जैसे मैंने पहले भी बताया है कि अहंकार बहुत सूक्ष्म होता है । और कई प्रकार का होता है । पिछले ८ वर्षों में मैंने स्वयं देखा है कि बहुत मधुर भाषी, बाहर से बहुत नम्र और गम्भीर दिखायी देने वाले उम्र रसीदा लोगों की भलाई में लगे हुए व्यक्तियों में भी सूक्ष्म अहंकार पैदा हो जाता है । मेरे परम प्रिय सतसंगियो ! मुझे तो आपके निःस्वार्थ सच्चे प्रेम ने और परमदयाल जी महाराज की अपार दया ने अविभूत कर दिया है । मैं कई बार सत्संगों में भी कहा करता हूँ कि 'मैं' शब्द का प्रयोग ही नहीं करना चाहता ।

व्यावहारिक दृष्टि से मैं इस सर्वनाम का प्रयोग इसलिये करता हूं कि जिस प्राणी को आप मानव दयाल कहते हैं, उसके अनुभवों के आधार पर आपको भी सच्चाई का ज्ञान हो जाये जब सद्गुरू अपने प्रिय शिष्य को आध्यात्मिक नाम प्रदान करता है ! वह उसके पहले संस्कारों को हमेशा के लिये समाप्त कर देता है और उसको गुरूमुखता के संस्कार प्रदान करता है । वास्तव में इसी संस्कारों के परिवर्तन का दूसरा जन्म कहा जाता है । इसको आध्यात्मिक जन्म भी कहते हैं । पहला जन्म शारीरिक होता है, जो माता-पिता के घर होता है । दूसरा जन्म आध्यात्मिक होता है जो सद्गुरू से प्राप्त होता है । वास्तव में नामदान या दीक्षा दूसरा जन्म कहा गया है । सनातन धर्म में यज्ञोपवीत या उपनयन संस्कार, जिसमें बालक को गुरू मन्त्र दिया जाता है, आध्यात्मिक जन्म है । इसलिये उपनयन या यज्ञोपवीत, संस्कार के बाद ही व्यक्ति को द्विज या दो जन्म वाला कहा जाता है ।

मैंने पहले भी आपको बताया था कि १९७६ में बार्जीनियाँ बीच की भरी सभा में परमदयाल जी महाराज ने कहा था "आज से तुम्हारा नाम आई सी० शर्मा नहीं मानवदयाल है। ऐ अमेरिका वालो ! मैंने मानव दयालु को अपना उत्तराधिकारी बनाया है। तुम इसी से मार्ग दर्शन प्राप्त करते रहना।" इसके बाद ही उन्होंने होशियारपुर में वह पत्र लिखा था जिसका हवाला मैंने ऊपर दिया है। मैंने कई बार आपको बताया है कि उस दिन के बाद और खासकर खासकर जब से मैंने परमदयाल जी महाराज को आज्ञा के अनुसार सत्संग क कार्य को संभाला है,मेरे सारे पहले संस्कार जो आई० सी० शर्मा के व्यक्तित्व से सम्बन्धित थे, समाप्त हो गये हैं इसलिए अब मैं अधिकतर मौज की अवस्था से रहता हूं, और कोशिश करता रहता हूँ कि मेरी 'मैं' मेरे रास्ते में न आये। लेकिन जब मैं इस बार विदेशी दौरे से ५ दिसम्बर को वापिस लौटने वाला था। मैंने मन ही मन में यह अभिमान किया कि इस बार अमेरिका और इंग्लैंड में लगातार व्यस्त होने के बावजूद भी मेरा स्वास्थ्य बिल्कुल ठीक रहा। इसके फलस्वरूप मुझे भारत पहुंचते ही जबरदस्त फ्लू हो गया। और १५ दिनों तक अस्वस्थ रहा। अस्वस्थ होते हुए भी १८ दिसम्बर का मासिक सत्संग हमेशा की भांति आयोजित हुआ, और सत्संग के दौरान भी मैं बिल्कुल ठीक रहा।

दिसम्बर मास की महत्वपूर्ण घटना यह रही कि मुझे २४-२५ दिसम्बर को जगाधारी और खिज्रराबाद सन्त मानवदयाल पब्लिक स्कूल के वार्षिक उत्सव पर जाना पड़ा। इस अवसर पर शिव देवराव शिशु शिक्षा केन्द्र मानवता मन्दिर स्कूल की अध्यापिकाओं और सन्त मानव दयाल पब्लिक स्कूल

की अध्यापिकाओं का आदान-प्रदान का सम्मेलन हुआ। वहाँ पर यह निश्चय किया गया कि भविष्य में मानवता मन्दिर से सम्बन्धित सभी विद्यालयों के अध्यापकों, अध्यापिकाओं के ऐसे सम्मेलन स्थान-स्थान पर होने चाहिये।

मैं २७ दिसम्बर को जयपुर पहुंचा। वहाँ पर अन्तर्राष्ट्रीय मानवता सत्य की संस्था की २८ दिसम्बर को बैठक हुई।

इस बैठक में यह तय किया गया कि जयपुर के केन्द्र के भवन का निर्माण जून १९८९ तक हो जाना चाहिए और जुलाई से सन्त फकीर मानवता पब्लिक स्कूल का प्रारम्भ कर देना चाहिए।

मुझे आशा है कि जयपुर का केन्द्र बहुत सफल रहेगा। यह भवन राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर से करीब १॥ किलोमीटर दूर है। सारा भवन पत्थर का बनाया जा रहा है। यह भवन बहुत ही भव्य दिखायी देता है। इसमें पब्लिक स्कूल, सत्संग केन्द्रऔर अतिथि भवन भी निर्मित किये जायेंगे यह सारा प्रयास वहाँ की स्थानीय संस्था स्वयं कर रही है। भवन निर्माण और आर्थिक व्यवस्था की पूरी ज़िम्मेदारी व मोती चन्द्र गोलच्छा की है। और उसमें श्री महाराज कृष्ण शर्मा, श्री पन्नालाल, श्री घनश्याम तथा उनके दूसरे सहयोगी दिलोजान से प्रयत्नशील हैं। जहाँ तक विद्यालय का सम्बन्ध है, इसकी सारी जिम्मेदारी इस संस्था के जनरल सेक्रेटरी प्रो० चाँदमल शर्मा की है। प्रो० शर्मा राजस्थान के जाने-माने विद्वान हैं। और कई शिक्षण संस्थाऐं सफलतापूर्वक चला रहे हैं। इन्होंने वचन दिया है कि जयपुर का मानवता पब्लिक स्कूल राजस्थान में ही नहीं बल्कि भारत में उच्चतम कोटि का स्कूल होगा। मुझे श्री मोतीचन्द्र गोलच्छा के व्य-

क्तित्व पर और प्रो० चाँदमल शर्मा की योग्यता पर नाज है। इन दोनों का आपस में बहुत सुन्दर तालमेल है। मैं इन्हें और इनके सहयोगियों को आशीर्वाद देता हूँ कि इनके प्रयास फलो भूत हों।

मैं २ जनवरी को मानवता मन्दिर होशियारपुर पहुंच गया। यहाँ पर १५ जनवरी को मासिक सत्सँग आयोजित हुआ। हर मास की भाँति इस सत्सँग में दूर-दूर के सत्संगी सम्मिलित हुए।

२३ जनवरी को हम लालरू होते हुए सांयकाल करीब ७ बजे दिल्ली पहुंचे। इस अवसर पर आचार्य शब्दानन्द, कु० साधना सक्सेना के अलावा श्री प्रदीप खन्ना, श्रीमती रेनू खन्ना और कुमारी पूजा भी हमारे साथ थीं। क्योंकि हमने २६ जनवरी १९७६ को आचार्य श्री के० पी० वर्मा की सुपुत्री के शुभ विवाह में सम्मिलित होना था।

आचार्य श्री के० पी० वर्मा की सुपुत्री कु० दीपा का विवाह सुचारू रूप से शानोशौकत से सम्पन्न हुआ। श्री के० पी० शर्मा और उनकी योग्या, श्रद्धालु पत्नी ने इस सफलता का श्रेय गुरू के आशीर्वाद को दिया। हमारे सत्संगियों में अगाध श्रद्धा और विश्वास है और उनके सारे साँसारिक कार्य मालिक की मौज से होते हैं।

२८ जनवरी को प्रातःकाल दहली से रवाना होकर हम सांयकाल करीब ६ बजे मानवता मन्दिर पहुंच गये।

२९ जनवरी को मासिक सत्सँग बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुआ। २ फरवरी को होशियारपुर से रवाना होकर उसी रात्रि को देहली पहुंचकर ३ फरवरी दोपहर को गाड़ी ए० पी० एक्सप्रैस से हम सिकन्दराबाद के लिये रवाना हो

गये ।

५ फरवरी, १९८९ से ११ फरवरी तक हैदराबाद, निजामाबाद तथा हनमकुण्डा में लगातार सत्संगों का सिलसिला जारी रहा। इस बार हर एक सत्संग में सत्संगियों की संख्या पिछले कई वर्षों के मुकाबले में बहुत अधिक थी। सत्संगियों की श्रद्धा और विश्वास का कोई पारावार नहीं था। हनमकुण्डा में एक अवसर पर पढ़ी लिखी सत्संगिन ने खड़ी होकर सत्संग की कार्यवाही शुरू होने से पहले उद्घोष किया "हम केवल मानव दयाल जी महाराज का सत्संग सुनने आये हैं। और उनकी वाणी सुनने के लिये बेताब हैं। मेरे प्यारे आन्ध्र प्रदेश के सत्संगी धन्य हैं, उनका प्रेम अगाध है। हनमकुण्डा जनरल सत्संग के सभी सदस्य धन्य हैं, जिनके प्रेम से प्रेरित होकर मैंने वचन दिया है कि मैं कभी वसन्त के अवसर पर हनमकुण्डा आने में सन्कोच नहीं करूंगा।

मेरे लिये हनमकुण्डा तीर्थ स्थान है, जहाँ पर मेरे दादा गुरू पूरनधनी परमसन्त दातादयाल महर्षि शिवव्रत लाल जी ने वर्षों तक रहकर तपस्या की, सत्संग दिये और सन्तमत के बहुमूल्य साहित्य की रचना की। और जहाँ पर हजूर नन्दू भाई जी महाराज और परमसन्त परमदयाल पण्डित फकीर चन्द्र जी महाराज ने एक जान दो कालब होते हुए परस्पर प्रेम का उच्चतम आदर्श प्रस्तुत किया। हमें इस बात पर गर्व है कि नन्दू भाई जी महाराज और परमदयाल जी महाराज ने कभी भी अपने आपको एक-दूसरे से अलग नहीं समझा। मैं स्वयं अपने-आपको हजूर आनन्द राव जी से बिल्कुल अलग नहीं समझता। मुझे तो आन्ध्र प्रदेश के सभी सत्संगियों में दातादयाल जी महाराज, परमदयाल जी महाराज और नन्दू

भाई जी महाराज की वैसी ही झलक दिखायी देती है जैसी वह मेरे अन्तर में मौजूद है और मेरे शरीर के कण-कण में उनकी प्रेममय मूर्तियों की छाप है ।

ऐ मेरे परम प्रिय आन्ध्र प्रदेश के सत्संगियो ! मेरा आपके प्रति आदर, सत्कार और अगाध प्रेम है हनमकुण्डा में विशेष कर गिरधर सिंह जी का परिवार ठाकुर करनसिंह जी और उनका परिवार, ठाकुर रामचरन सिंह और उनका परिवार तथा ठाकुर कमलसिंह और उनका परिवार, सच्चे दिल से बसन्तसन्त सम्मेलन की सेवा करता है। इसी प्रकार सेठ विद्यापति जी और स्वर्गीय सोमलिंगम के परिवार वाले अनावरत रूप से सेवा करते रहते हैं। युवा पीढ़ी में श्री रामचरन सिंह जी की सुतुत्री कल्पना, श्री कंवलसिंह जी की सुपुत्री कु० ज्ञानी, अशोक कृष्णा सभी की सेवाऐं अद्वितीय है। पुराने कार्यकर्ताओं में से श्री एलैया, श्री रामकोट रेडी तथा श्री गोपाल नागोरी की सेवाऐं सराहनीय हैं।

सम्भवतया मैं यहां पर अन्य उत्साहपूर्ण और श्रद्धापूर्ण सत्संगियों के नाम स्मरण नहीं कर पा रहा। वास्तव में मेरे लिये हरएक सत्संगी अमूल्य हैं, अद्वितीय हैं, सराहनीय हैं और मेरे अनन्त प्रेम का पात्र हैं।

हैदराबाद में भीं सभी पुराने सत्संगी और सभी संस्थायें मेरे आभार का पात्र हैं। फकीर सत्संग केन्द्र, चिन्तल बस्ती सत्संग केन्द्र, संघमित्रा सोसायटी सभी ने इस वर्ष विशाल सत्संगों का आयोजन किया और सतसंगियों की संख्या पिछले सभी वर्षों के मुकाबले में बहुत अधिक मात्रा में उपस्थित थी यहाँ पर युवा पीढ़ी में से श्री रूपचन्द्र, श्री भगवान व्यास, श्री नरसिंह व्यास तथा उनके भाइयों ने और उनके सम्बन्धियों ने

इस बार अद्वितीय आयोजन किये । व्यास परिवार की श्रद्धा का श्रेय श्री भगवान व्यास के पिता श्री मदनलाल जी और उनकी योग्या श्रद्धालु पत्नी श्रीमती मैना को देना चाहिए । इस बार तो व्यास परिवार पूर्ण रूप से शरणागत हो गया । विशेषकर युवा पीढ़ी ने इस बार एक बहुत बड़ा स्थाई कार्य किया है उन्होंने विशेषकर श्री रूपचन्द्र और उसके परिवार श्री भगवान व्यास और उसके परिवार,श्रीमती लीलातिवारी और उसके परिवार ने हैंदरावाद क्षेत्र में मानव दयाल नगर में दो हजार पांच सौ वर्ग गज भूमि पर मानवता मन्दिर का शिलान्यास कराया और एक ही दिन में अनुमानतः दो लाख रुपये का अनुदान एकत्रित कर लिया ।

मैं भौतिक दृष्टि से उनकी सराहना नहीं कर रहा । इन सभी नवयुवकों में परमतत्व को प्राप्त करने की तड़प है । और मुझे पूरी आशा है कि यह सब और उनके परिवार लोक और परलोक दोनों को साध लेंगे ।

जहाँ तक निजामाबाद का सम्बन्ध हैं तिवारी परिवार विशेषकर उल्लेखनीय है । इस परिवार में विशेषकर दो व्यक्ति पूर्ण रूप से शरणागत हैं और उनके लिये मेरा आशीर्वाद २४ घण्टे उनके साथ है ।

मैं सच्चे दिल से चाहता हूं कि यह दोनों आध्यामिकता की पराकाष्ठा पर पहुंच जाँय । और इनके माध्यम से सारा परिवार तर जाये । यह दो व्यक्ति हैं—मेरा परमप्रिय सन्त गति में रत स्व० किशनलाल तिवारी का सुपुत्र ओमप्रकाश तिवारी व उसकी माता श्रीमती सरला तिवारी । मेरे प्यारे सत्संगियो ! मुझे यहाँ पर बड़े खेद से यह सूचित करना पड़ रहा है कि मेरे परम प्रिय श्री कृष्ण लाल तिवारी

आन्ध्र प्रदेश जाने से कुछ ही दिन पहले अचानक देहान्त हो गया। मेरे प्यारे कृष्ण ने करीब ४० वर्ष की आयु में ही इस असार संसार को छोड़कर परमधाम जाने का निश्चय कर लिया था। हालाँकि मेरा प्यारा कृष्ण अपने बेटे ओमी की प्रेरणा से मेर द्वारा दीक्षित हुआ था। वह अधिकतर प्रकाश के स्तर पर ही रहता था। मैं आपको प्रेरणा देने के लिये बता रहा हूं कि मेरे प्यारे ओमी (ओमप्रकाश तिवारी) ने इस आपत्ति में जो साहस, धैर्य और बुद्धि को स्थिरता का प्रमाण दिया है वह बड़े-बड़े सन्तो में भी दिखायी नहीं देता। वह अपने पिता श्री के अचानक परमधाम जाने पर बिल्कुल नहीं रोया। बल्कि अपनी माता को उसके रोने पर भी पूरा धैर्य प्रदान करता रहा। प्यारी बेटी सरला का रोना स्वाभाविक और मानवीय है किन्तु प्यारे बेटे ओमी को दृढ़ता और उसके मन की समता अद्वितीय है।

यह बच्चा आगे चलकर लौकिक समृद्धि प्राप्त करने के साथ राधास्वामी की परम अवस्था को प्राप्त कर लेगा। मैं सच्चे दिल से आशीर्वाद देता हूं कि मेरे प्यारे ओमी तथा मेरी बेटी सरला की भक्ति दिन-प्रतिदिन शुद्ध पवित्र और दृढ़ होती जाये।

१२ फरवरी को हम हनमकुण्डा से करीम नगर होते हुए श्री भगवान व्यास की कार में अहेरी के लिये रवाना हुए। रास्ते में करीम नगर में थोड़े समय के लिये श्री गोरी सिटी तिरुपति के घर पर रुके। श्री तिरुपति ने हमेशा की भाँति हमारा आतिथ्य किया और मानवता मन्दिर के लिये हर वर्ष की भाँति अनुदान भी दिया। इसी प्रकार थोड़े समय के लिये श्री रामकोट रेड्डी, गोपाल, राजू और लक्ष्मीकान्तम के घर

पर भी रूके। इन सबकी श्रद्धा अगाध है। हम उसी दिन सांय काल अहेरी पहुंचे।

इस मासिक सन्देश में यहाँ तक के दौरे की सूचना पर्याप्त है। इससे आगे की सूचना अगले अंक में दी जायेगी।

इन शब्दों के साथ मैं आप सबको हार्दिक आशीर्वाद देता हूं। और चाहता हूँ कि आप सब सुख, समृद्धि, आनन्द और शान्ति का अनुभव करें।

सबको राधास्वामी !

आपका
फकीरमय मानव

एक एकान्त सेवी उंमत का खेल

(मानवता और सन्तमत)

हुजूर दयाल भाई साहब नन्दू जी महाराज का एक प्रेम तथा कृपा पत्र मोतियों की लड़ियों में पिरोया हुआ प्राप्त हुआ। कितना शिक्षाप्रद और महत्वपूर्ण है यह कि बारम्बार पढ़ा और यहाँ अंकित करता हूं।

जिस तरह जिस शक्ल में करते हो याद,
वह तुम्हारे सामने मौजूद है।
दिल में सूरत बन गई आली जनाब,
वह नहीं होती कभी मफकूद है।

चाहे घर में तुम रहो, बाहर रहो,
मिलते हैं दर्शन बराबर आप ही आप ।

देखता हूँ रूबरू बैठे हुए,
लिखते जाते हैं किताबें लाजवाब ।

क्या बताऊं अपनी हालत भाई जान,
सोने में चलने फिरने में हैं आप ।

बातें भी करते हैं मीठी मीठी वह,
वक्त गुजर जाता है आसानी से आप ।

कहते हैं दिल के तखय्युल पण्डित जी,
और सच कहते हैं बातें लाजवाब ।

पर वक्त मेरा गुजरता यों चला,
राधास्वामी को नहीं करता हूं याद ।

खुश रहो करते रहो सुमिरन भजन,
जिन्दगी का वक्त गुजर जाय आसानी से ।

फिक्र को नहीं पास आने दो कभी,
यह इबादत है इबादत का जतन ।

राधा स्वामी धुनि सुनो अन्त में आन,
सुनते-सुनते खुद को भूलो भाई जान ।

आप आप में आप तुम हो जाओगे,
जात में वासिल रहोगे खुद को जान ।

है दुआ दिल से यही मेरे अजीज,
को फिक्रो गम की कुछ न हो दिल में तमीज।

॥ मनुष्य बनो ॥

जुस्तजू किस की करें बेकार है,
गुफ्तगू करना अबस लाचार है ।
दिल में दिल देकर पड़े रहते हैं हम,
बातचीत करना किसे दरकार है ।
मौज में उसके बराबर तुम रहो,
जिस तरह रक्खे उसी में खुश रहो ।
वह है दाना दिल बड़ा हुशियार है,
नाम जो लेता है उसका यार है ।
भाई को खिदमत करो जी जान से,
वह है यकता दुनियाँ में ईमान से ।
खून में रिश्ता है दोनों का बंधा,
सतगुरु है दाता है भाई है सगा ।
देखना चाहो खुदा को देख लो,
जानता है सबके दिलों की पेख लो ।
तुम पर और सब पर है वह मेहरवाँ,
कर लो दर्शन तुम खुदा के कदरदाँ ।
सतगुरु के रूप हैं जीशान हैं,
सन्त मत की जान हैं और प्रान हैं ।
खोल कर सब सारी बातें कह दिया,
राज सारा आज तुमको दे दिया ।
होके प्रकट कर दिया अज्ञान दूर,
अशरफ उलमखलूक हैं नूरान नूर ।
सर झुकाता हूँ उन्हें मानो हजूर,
दर्शकों से होती सारी बलायें दूर ।

आप दर्शन करना सुबह और शाम में,
नाम उनका लेना हो गुमनाम में ।
राधास्वामी रूप उनको जान लो,
महर्षि के पुत्र उनको मान लो ।
उनका है उपकार इस जगत में बड़ा,
जिस्म इन्सानी में सतगुरु है खड़ा ।
जिसको दर्शन करना है कर ले जरूर,
आप आ जायेगा दर्शन से सरूर ।
दाता ने चोला है बदला आप खुद,
वस्फ अपना भर दिया है होके चुप ।
जिसको आंखें मिलीं जानेगा रूप,
है कबीर नानक और राधास्वामी सरूप ।
अब जुबां में ताव नहीं है महरबां,
हो बयान किस तरह सब खुबियां ।
जानता और बूझता रहा हूँ चुप,
भाई मेरे बाप मेरे सतगुरू के रूप ।
राधास्वामी धाम के वासी हैं ये,
शान्ति के और आनन्द के राशी हैं ये ।
तू झुका सर इनको सब कुछ मान तू,
हैं जगत के ये पिता इनको जान तू ।

यह जो कुछ भाई जी ने लिखा है, नये सौ पैसे सत्य है। हम सब इसके लिये उनके कृतज्ञ हैं। क्यों ? इसलिए कि:—

कामी तरे क्रोधी तरे, पापी तरे अनन्त ।
आन उपासक कृतघन, तरे न नाम रटन्त ।।

सब तर सकते हैं किन्तु आन-उपासक और कृतघन नहीं तर सकते। हमें तो दाता दयाल जी और परम पिता जी का

॥ मनुष्य बनो ॥

तारने वाले ने तारा, तर गये हम तर गये।
जिनको तरना था तरे, भव निधि के वह तट पर गये।

जब हमें कोई भाव, विचार, संकल्प, वासना, इच्छा ही नहीं रही। उनकी दया से सब काम पूरे हो गए तो हम समझते हैं कि हम इस भव सागर से पार हो गये और तर गए। इसलिये हम कृतघन नहीं होना चाहते और न किसी को इस की सम्मति देते हैं। सन्तों के मार्ग में प्रत्येक जीव को मानवता सिखायी जाती है और जीवन में आशावादी रहने का गुरु बताया जाता है। निराशावादी नकारात्मक विचार सत्संग में दिये ही नहीं जाते। जो जीव संशय और भ्रम और असमंजस में रहते हैं हाय यह न हो जाये, हाय यह काम न बिगड़ जाये तो फिर उनकी वैसी ही दशा होती है: –

इन्सां को चाहिए कि न सोचे बुरा कभी।
रहती है होके बात वह जो आई ख्याल में ॥

बुरी बात सोचे ही नहीं। अपने सतगुरु पर पूर्ण विश्वास रक्खे हमारी समझ में विश्वास ही गुरू कहलाता है। कोई भी बात उनसे छिपाना नहीं चाहिए। छल कपट को छोड़कर जो उनके दरबार में जाते हैं अपना मनोरथ सिद्ध करते हैं। प्रसन्न चित्त रहने का अपना स्वभाव बनाओ। दूसरों को प्रसन्न करो और प्रसन्नता लो। यदि हम प्रसन्न नहीं तो कोई भी प्रसन्न नहीं। अपने क्रियात्मक जीवन से इसे करके दिखाओ।

खुश रहो और हो खुशी की जिन्दगी।
खुश दिली ही है खुदा की बन्दगी ॥

दूसरी बात:-सादा जीवन उच्च विचार, हो जायें तो बेड़ा पार

जिन्दगी सादा रहे ऊंचे रहें तेरे ख्याल।
जल्द हासिल होगा तुझको, आप इन्सानी कमाल ॥

दातादयाल जी वर्णन किया करते थे "उतावला सो बावला' जल्दी का काम शैतान का। जो काम हो सहज स्वभाव और सहज रीति से हो। तीसरी बात यह कि जब तक अपने आप की पहचान नहीं होगी तब तक हम दूसरों को कैसे समझेंगे। आप आपको आप पहचानो, कहा और का नेक न मानो। अपनी पहचान गुरू की संगत से होती है हम कौन हैं, कहाँ से आये हैं, कहाँ जायेंगे। (४) यदि कोई हमसे घृणा करता है तो हम उसे प्रेम की दृष्टि से देखें। पर यह महा कठिन बड़ी ठोकरें खाने के पश्चात यह बात समझ में आती है। (५) इसी प्रकार हमारा भोजन सादा हो और उतना ही खायें जो कि आवश्यक है। स्वामी जी महाराज ने कहा है भोजन थोड़ा खा तेरे भले की कहूं, औरन सुख पहुंचा तेरे भले की कहूँ, मोठी वाणी बोल तेरे भले की कहूं, हिंसा चित्त न धार तेरे भले की कहूँ। मैं तो यह कहूंगा कि:—

राहे खुदा में आ जा तू अपने सर के बल चल।
है नाक का वह रस्ता सीधा न कुछ है हलचल।
पोथी में पत्रों में, राजे खुदा नहीं है।
ये खंदकें हैं गहरी, तू सोच कर संभल चल।
जब तक मिले न मुरशिद, इस राह में न आना।
धोखे में तू पड़ेगा, हरगिज न तू मचल चल॥

गुरू की खोज व सत्संग करके आगे बढ़े चलो। एक स्थान पर न ठहरो। जो पग पड़े आगे ही पड़े। इस प्रकार चलते हुए अपनी जीवन यात्रा प्रसन्नतापूर्वक सफलकर लोगे प्रसंता-पूर्वकजीवन बिताने का रहस्य किसी पूर्ण पुरुष के सत्संग द्वारा ही प्राप्त हो सकता है। वरन देखा गया है कि तनिकआपशाँत विपत्त, कष्ट क्लेश. संकट में जीव भयभीत और चिताग्रस्त हो जाते हैं अपना रूप भूल जाते हैं कि हम सत्-चित्त आनन्द हैं।

वह नहीं समझते कि:—

मुसीबत जजबाये दिल को, तरक्की देके कहती है।
जमीं में दबके ताकत, खुद बखुद आती है दाने में।
तुम्हें सुनकर खुशी मिलती है, मेरी सच्ची बातों से।
मुझे भी लुत्फ कुछ तो मिल रहा होगा सुनाने में।

इसलिये संकट और भय के समय डरना नहीं चाहिए यथा शक्ति गुरू का नाम लेते हुए उसे सहन करना चाहिए। फिर वही दुःख,संकट सुखमय और आनन्ददायक हो जाता है किसी का भी परिश्रम व्यर्थ नहीं जाता।

कष्ट सहे बिन कामिनी पूतन लेत उचंग !
दुःख की बलिहारी है कि, जिसने जपाया नाम को।
सुख के सिर पत्थर पड़े, जिसने भुलाया नाम को।

तो वह नाम गुरू का दिया हुआ ही हमारी प्रत्येक प्रकार से रक्षा व संभाल करता है संकट को पास नहीं फटकने देता इसी को युक्ति समझ,इसी को ज्ञान कहते हैं बिना इसके वास्तविक प्रसन्नता और मोक्ष मुक्ति नहीं मिल सकती। मेरा तो दातादयाल वं परमपिता जी की गोद में जीवन में बीत गया। वही मेरे रक्षक रहे हैं। ६६ वर्ष की आयु तक तो उनकी अपार दया से बड़ी मौज में जीवन बीता। पिछले ढाई वर्ष से कुछ शारीरिक दशा में गिरावट आयी शारीरिक भोग भोगता रहा चिकित्सा आदि भी की। अन्त में परिणाम यह निकला कि दुःख भी सुख ही है अब औषधियों का प्रयोग भी छोड़ दिया। सब कुछ दातादयाल व परम पिता जी के ऊपर छोड़ दिया है सुखी रहता हूं। इस दशा को वर्णन नहीं कर सकता।

सुख के माथे सिल पड़े, जो नाम हृदय से जाय।
बलिहारी वा दुःख की, जो पल-पल नाम रटाय ।।

दुःख में सुख रहता है तो, हमको नया कुछ भी नहीं मौज

को क्या जीव जाने दुविधा का सिर भार है।

मालिक की इच्छा पर निर्भर हूँ और उनकी मौज में प्रसन्न रहता हूँ।

राजी बरजा रहता हूं, राजी बरजा हूँ।
वह जानते हैं मुझको कि मैं मुर्द खुदा हूं।

अर्थ विषय

॥ ले० दातादयाल जी ॥

माया छाया एक रूप हैं, पकड़े हाथ न आवें।
रूप जानले इनका भाई, फिर नहीं यह भरमावें
जो भागे माया के डर से, वह कायर अज्ञानी।
माया मिथ्या कल्पित झूँठी, नाटक खेल की खानी।
नाटक शाला सब जाते हैं देखें, खेल तमाशा।
किसी के चिन्ता उदासी छाई,किसी को हर्ष हुलासा।
साधू साक्षी रूप से देखें, अपना रूप न त्यागें॥
नहीं वह भिड़ें न लड़ भिड़ कल्पें,नहीं माया से भागें॥
सूम बना माया की गठरी, अर्थ का लाड़ प्यारा।
सखी माल दौलत को भोगें, रहे सदा छुटकारा॥
नहीं माया है दुःख का कारन,दुख अज्ञान है भाई।
समझ ले अपना रूप अनूपा, फिर यह हो सुखदाई॥
काम है माया धर्म है माया, अर्थ है माया रूपा।
जो नहीं इनका रूप पिछाने, गिरे भरम के कूपा॥
कूप गिरे सो गोता खावें; कभी नींचे, कभी ऊपर।
चेत न आवे, समझ न पावे, भार कष्ट का सिर पर॥
संत समागम जो कोई आवे सारभेद कुछ बूझे।
राधास्वामी गुरू की दाया, निजस्वरूप की सूझे॥

गुरू पूजा

॥ ले० परमदयाल जी ॥

ध्यान मूलम् गुरू मूर्ति, पूजा मूलम् गुरू पदम् ।
मन्त्र मूलम् गुरू वाक्यम् मोक्ष मूलम् गुरू पूजा ॥

मैं खोजी हूँ, जिज्ञासू हूं। बचपन से उस राम से मिलने की लालसा भी।

मौज दातादयाल जी के चरणों में ले गई,मैंने उस राम व मालिक को दाता के रूप में मानकर अत्यन्त प्रेम किया दाता कभी-कभी संकेत किया करते थे स्पष्ट नहीं कहा। मैंने स्पष्ट क्यों कहा ? क्योंकि उनके संकेतों को मैं समझ नहीं सकता था तो मुझे विचार हुआ कि संकेतों को समझना महा कठिन है। संसार को क्यों न स्पष्ट कर दिया जाय दया का भाव रखते हुए मैंने स्पष्ट वर्णन से कार्य किया। जब मैं उनको मालिक मानकर उनसे प्रेम करता था तो वह मेरी सुरत को मालिक की ओर लगाने की अपेक्षा गुरू भक्ति की ओर लगाने का प्रयास किया करते थे। मैं दाता के रूप को मालिक समझ कर जो उनसे प्रेम करता था, वे मेरे विचार को बदलने के लिये संकेत करते थे किन्तु मैं संकेत को समझता न था। उन्होंने एक शब्द में मेरे नाम लिखा था :—

मन तू सोच-समझ पग धार । टेक ।
बिन समझे कोई सार न पावे, भटके बारम्बार।
संशय दुविधा और चतुराई, यह अज्ञान विकार ॥ मन ॥
कोई नर पशु है कोई त्रिया पशु, गुरू पशु कोई गंवार।
वेद पशु हैं सब संसारा, बिना विवेक विचार ॥ मन ॥
माया पशु माया का बंधुवा मुक्ति पशु स्वीकार।
भक्ति पशु बंधन नहीं काटे, बूड़ा काली धार ॥ मन ॥

ज्ञान पशु की क्या करूं निन्दा, वह ग्रन्थन के लार।
जड़चेतन की गांठ न खोलें,उरझ उरझ रहा हार ॥ मन ॥
योग पशु बंधे योग की रस्सी, बैठे आसन मार।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी,सेवक हुआ भव पार ॥

ऐसे-ऐसे शब्द लिखा करते थे दातादयाल जी इसके अतिरिक्त मैं चूंकि राधा कुल में उत्पन्न हुआ था, हिन्दू जाति के संस्कार मस्तिष्क में विद्यमान थे। अनेक बार यह विचार होता कि जब गुरू का रूप, गुण आत्मिक से परे हैं व मालिक भी परे हैं तो गुरू का शब्द क्यों गढ़ा गया ? मालिक का शब्द ही पर्याप्त था। क्योंकि मैं तो राम या मालिक के मिलने की लालसा में २४ घण्टे रोने के पश्चात एक स्वप्न तथा दृश्य था जिसने यह विश्वास दिलाया कि वह राम दातादयाल जी के रूप में आया हुआ है किन्तु दाता दयाल जी जो कुछ समझते थे वह मेरी समझ में न आता था। अब अनुभव ने सिद्ध किया कि यह गुरू के शब्द का प्रयोग सही है।

चाहे क्यों न एक व्यक्ति समस्त आयु निःसन्देह उस परम तत्व सर्वाधार से प्रेम, प्रार्थना, पूजा आराधना करे, उसके खिचाव में मस्त, बेसुध होता रहे उसको आनन्द मिलेगा, महा आनन्द मिलेगा किन्तु शान्ति नहीं मिल सकती। उस मालिक के प्रेम में वह मग्न होकर लय होगा, उदासी भी आयेगी,प्रसन्नता और मस्ती भी आयेगी किन्तु शान्ति न आयेगी जब वह प्रेम के भाव में अर्न्तध्यान होकर उस महान आनन्द को प्राप्त करेगा तो उसका फिर उत्थान होगा। उसकी सुरत फिर वहाँ से हटेगी। मैं प्रेम में बेसुध होता रहा हूं। दाता के रूप को राम मानकर मग्न होता रहा हूं आनन्द लेता था परन्तु शाँति न मिलती थी। जब वहाँ से उत्थान होता फिर थोड़े समय के पश्चात तथा दूसरे दिन ही फिर वही भाव उठता फिर प्रेम

करता पर शान्ति न होती। बात सूक्ष्म है। प्रण के अनुसार वर्णन कर रहा हूँ। देखो ना स्त्री पुरुष मिलते हैं, आनन्द लेते हैं, फिर वहां से उत्थान होता है महीने के पश्चात फिर भावुकता उत्पन्न होती है और यह संघर्ष समाप्त नहीं होता। इच्छा गुरू भक्ति से जो मुझे मिला वह यह है कि वह भाव उसे प्राप्त करने का जो उठता था, अब नहीं उठता है। बार-बार उस मालिक से मिलने की लालसा नहीं रहती है। पुरुष इस कामनावश स्त्री प्रसंग में आनन्द लेता है, किन्तु वह भोग शान्ति नहीं देता। जब उसे स्त्री के रूप का पता लग जाता है कि वास्तविकता क्या है ? तो वह भोग रहित होकर शान्ति लेता है। इसी प्रकार गुरू भक्ति से शान्ति मिलती हैं। बार-बार उसे प्राप्त करने की खोज समाप्त हो जाती है प्रेम करती हुई सुरत मग्न होती है। मेल हो गया, किन्तु फिर उत्थान होता है मगर सुरत को शब्द के मिलने की चाह शेष रह गई। गुरू भक्ति जो है उससे क्या होता है ? उस मिलाप को लालसा नहीं रहती। यह कब होता है ? जब सुरत को अपने और मालिक के रूप का ज्ञान हो जाता है। इस ज्ञान दिलाने वाली शक्ति का नाम है गुरू।

ध्यान मूलम् गुरू मूर्ति पूजा मूलम् गुरू पदम्
मंत्र मूलम् गुरू वाक्यम्, मोक्ष मूलम् गुरू कृपा॥

इस वास्ते गुरू मत का ध्येय शान्ति है। यह मेरे जीवन का अनुभव है। मुझे क्या मिला ? शान्ति !किन्तु जनसाधारण गुरूमत के अधिकारी नहीं हैं। क्योंकि उनकी इच्छाऐं भिन्न-भिन्न होतीं हैं। सन्तों ने दया करके सत्संग की प्रथा प्रचलित की। उच्च शिक्षा न देते हुए, सर्वप्रथम इच्छाऐं सत्संग द्वारा पूरी करा देते हैं जो कोई उत्कृष्ट इच्छा लेकर विश्वासपूर्वक आते हैं, सफल होते हैं।

सतगुरू वह है, जिसे मिलाप की इच्छा नहीं, मुक्ति की लालसा नहीं। वही गुरू पदवी के योग्य है। ऐसे गुरू क्या करते हैं ? मेरे छोटे भाई को दाता दयाल जी ने शान्ति प्राप्त करने की शिक्षा न देकर, उसे काम करने का उपदेश दिया। चूंकि मे छोटे भाई की बचपन में संगत सदैव बड़े आदमियों के पुत्रों से रहती थी और उनके माता-पिता की दशा देखकर उसे पदाधिकारी बनने की लालसा रहती थी। यदि उसे शाँति की शिक्षा दी जाती तो वह असफल होता। जिस मन्तव्य के लिये कोई जिज्ञासू जाता है उसे पूरा करते हैं या उसके विचार को उस मन्तव्य से हटा देते हैं। उदाहरणतः एक पहलवान किसी स्त्री पर मोहित हुआ उससे मिलना चाहता था, सफल नहीं हुआ। वह किसी महात्मा के पास गया उसने युक्ति बताई औषधि दी। उसने सबको खिलाया, तब रूप समझ में आया जब मन्तव्य का अनुभव जिज्ञासू को हो जाता है तो फिर वह सन्त या शान्ति के मंत की ओर जाता है।

गुरु की भक्ति नाम की भक्ति से अच्छी है। यह राम की भक्ति करने वाले मरने के पश्चात कदाचित ही अपनेघर पहुंच पाते हों। मेरे पास प्रमाण नहीं कि उनके साथ क्या हुआ होगा ? किंतु गुरु भक्ति इसी जीवन में शांति को प्राप्त कर जाता है और उसको राम क मिलने की लालसा नहीं रहती। यह है गुरु मत :-

माला फेरुं न हरि भजूं, मुख से कहूं न राम।
मेरा राम मुझे जपै, तब पाऊं विश्राम ।।

इस वास्ते क्या करना चाहिए ? सर्वप्रथम सत्संग सत्संग में जाने से मानव की समस्त उलझनें, शंका, संदेह व संशय

धीरे-धीरे निवारण हो जाऐंगे। तो मैं विवशतः राम, पार ब्रह्म, सत अलख अगम, अनामी लोक की अवस्थाओं से बढ़कर गुरू की जात को मुख्य समझता हूं और यही बात हजूर महाराज जी ने कही है :

ना जानूं सतलोक अनामी, सबसे बढ़कर राधास्वामी।

गुरू में ही इन शब्दों को व्यक्त किया। यही बात दाता दयाल जी ने मुझे लिखी थी :-

गुरू भक्ति है सबका सारा। देखा सोचा समझ विचारा।
मान मान यह वचन हमारा। सोच समझ पग धार फकीरवा

जब मैं दाता दयाल जी को राम या मालिक मानकर उन से प्रेम करता था तब उन्होंने मुझे ऐसे ऐसे शब्द लिखे थे। एक ही उपाय है सत्संग। गुरू भक्ति क्या है ?

गुरु जो कहें सो हितकर मान गुरु जो कहें सो चित्त धर ध्यान

सबके लिये एक ही मार्ग नहीं है। "गुरू भव दुख भंजन हैं।" का अर्थ है कि जब कोई भगवान के प्रेम की चाह में मग्न होता है तो यह भी भव का दुःख है। किसी चाह में दौड़ना चाहे वह मुक्ति या राम से मिलने की, या कोई और हो वह भव ही तो है। कोई पुत्र वैभव आदि प्राप्त करने के लिये साधुओं के पीछे लगा रहा। यह सब भव में गिरे। इस चाह से छुटकारा पाने के लिये गुरू पूजा है। सत्संग में जाओ अनेक बार रेडियेशन से आप ही आप मन की दशा बदल जाती है। यह रेडियेशन का नियम है।

मैं इसे सत्य समझता हूँ यदि यह न होता तो मैं सत्संग कराना भी अपराध या पाप समझता।

सत (अद्वैत) पद की महिमा की कथा

मारवाड़ के राज्य में एक जगह जहाँ बीकानेर और जोधपुर की सीमा मिलती है बरगद का एक बड़ा वृक्ष खड़ा है। वृक्ष ने बहुत लम्बा चौड़ा मैदान घेर रखा है। और गर्मी के दिनों में जब धूप का मारा हुआ पथिकउसके नीचे आता है एक प्रकार से उसके साये में बैकुन्ठ के सुख का आनन्द लेता है।

रेगिस्तान की दुर्गम कठिनाई का हाल कुछ न पूछो मध्याँन जब सूर्य भगवान सिर पर आ जाते हैं इस जोर की तपन से पाला पड़ता है कि जो कहे नहीं बनता। ऊपर सूर्य नीचे गरम रेत यह प्रतीत होता है मानो किसी ने झुकते हुए भाड़ में झोंक दिया है। वायु के झोकों से गर्म रेत उड़-उड़ कर शरीर में लगती है। आँख, नाक, कान सब उससे भुड़भुड़ हो जाते हैं। राह चलना भी कठिन है। कोसों तक गाँवों का पता नहीं न कहीं वृक्षों का साया न कहीं नदी नालों का किनारा। सूर्य का तेज तो फिर भी सहन कर लिया जाता है पर रेत की तपन से ईश्वर बचाये। जिस प्रकार एक अत्याचारी राजा का दण्ड तो सह लिया जाता है पर उसके अफसरों का दारूण शासन नहीं सहन होता। बिल्कुल यह ही दशा सूर्य की धूप और रेत की तपन की होती है। आँखें बन्द हैं, चित्त व्याकुल है, जी दुःखी है। न कुछ कहा जाता है, न सुना जाता है। इस दुःख का अनुभव केवल वे ही लोग कर पाते है जिनको कभी मारवाड़ के भयानक रेगिस्तान में जाने का अवकाश मिल जाता है। ऐसे दुःखी दीन पथिकों के लिए वह बरगद का [illegible] बैकुण्ठ के कल्प वृक्ष से कम मूल्य का प्रतीत नहीं होता।

हमारा समाज भी धूप के तेज को झेलता हुआ वहाँ पहुँचा उसके साये के नीचे पहुंचते ही नेत्र खुल गये। मृत्यु जो निकट दीखती थी उससे बच गये। जीवन को ढाढ़स बंधा ईश्वर को हजार-हजार धन्यवाद दिया। और सब लोग उसके जीवन की शुभकामना करने लगे जिसने ऐसे सुनसान विकट जंगल है इस वृक्ष को लगाकर प्राणी मात्र पर अहसान किया था सब लोगों ने वृक्ष के नीचे पहुंचते ही मौके से अपनी दड़ियाँ बिछा ली। मैंने भी ऐसा ही किया। वे सब लोग तो सो गये। मैं जान-बूझ कर जागता रहा। नेत्र कुछ बन्द कुछ खुले। अधसोते हुए की दशा थी पर मैंने लेट जाना या सो जाना उचित न समझा। उठ कर टहलने लगा। जब वृक्ष की दूसरी ओर गया वहाँ एक चबूतरा बना हुआ था। मुद्दत से उसको किसी ने साफ नहीं किया था फिर भी वृक्ष के नीचे बने होने के कारण उसको कोई हानि नहीं पहुची थी। इस चबूतरे को देखकर मेरे चित ने तरह-तरह के विचार उत्पन्न होने लगे। मैं सोचने लगा सम्भव है यह चबूतरा किसी देवता का स्थान हो। और लोग यहाँ आकर पूजा करते हों। पर ज्यादा विचार करने पर यह ख्याल गलत साबित हुआ। क्योंकि वहाँ पूजा करने का कोई निशान मौजूद नहीं था मैंने दिल में कहा क्या अच्छा होता अगर इस चबूतरे के जुबान होती तो आज यह अपना हाल सुनाता और रेगिस्तान के एकान्त में मन बहलाव का साधन बन जाता। यह ख्याल मन में पैदा ही हुआ था कि सचमुच चबूतरे में जुबान आ गई। मुझको उससे प्रेम पैदा हुआ प्रेम असली जीवन होता है। प्रेम की शक्ति करामात दिखाती है। लड़कियाँ अपनी गुड़ियों से बातचीत करती हैं मैं अपनी छोटी लड़की को कभी-कभी जब कोई पास नहीं होता दोपहर के

समय गुड़ियों से बातचीत करते देखता हूँ। ऐसा प्रतीत होता है मानो दो प्यार करने वाले आत्मा सचाई से मिलते हुए बातें कर रहे हैं। मेरी भी इस समय यह ही दशा थी। मैं आश्चर्य में और व्याकुल होकर इसको देखने लगा। एक घड़ी दो घड़ी, तीन घड़ी तक इसको देखा किया। मुझको प्रतीत हुआ मानो चबूतरा जीवित ही मौजूद है। मैंने कहा दि तुझें जुबान मिली होती तो आज तुझसे मुझको कितने ही हालात सुनने में आते। इस जगह पर कितने मामले हुए होंगे। यह कितनी ऐतिहासिक घटना घटी होंगी। तू बोलता क्यों नहीं कुछ तो अपनी रामकहानी सुना दे ताकि अकेलेपन का समय कटे और मुझको मनोरंजन की कहानी हाथ आये।

चबूतरे ने कहा मैं बोल सकता हूं। चाहे मैं बाहरी जुबान से बातचीत नहीं कर सकता पर मेरी वाणी वैसे ही रहस्यमई है जैसी तुम्हारी। पर मैं बोलूं तो किस से बोलूं। लोगों के कान नहीं हैं वह मेरी रामकहानी सुनने को तैयार नहीं हैं।

मैंने उत्तर दिया : अभी थोड़े दिन की बात है मैंने काल की आवाज सुनी है। मेरी आँखों के सामने संसार के अगमा-पाई (नाशवान) होने का चित्र बहुत दिन से फिर रहा है। मेरे संसारी प्रेम के चित्र को काल चक्र ने मिटा दिया मैं जिस को प्यार करता था काल भगवान ने दम के दम में मुझको उससे अलग कर दिया। तू समझ सकता है कि इस समय मैं बड़े ध्यान से तेरी बात सुनूंगा। यदि अब तक तुझको कोई नही मिला है तो कोई हर्ज नहीं। मेरी परीक्षा कर मैं इसी कारण मारा-मारा फिर रहा हूँ कि कहां मेरे मन बहलाव की सामग्री हाथ आवे। मैं तेरी रामकहानी सुनने को तैयार हूं।

चबूतरा बोला मैं तुझसे जरूर बातचीत करूंगा।

ऋषि दत्तात्रे से वृक्ष, नदी, नाले, कंकड़ पत्थर सब बातें किया करते थे। आज मैं तुमको अपना कुछ हाल सुनाऊंगा।

मैंने कहा चबूतरे! तुझ से प्रेम की सुवास आती है तेरे साथ मुझको प्रेम है। मालूम नहीं मैं क्यों तेरी ओर खिचा जाता हूं। जैसे लोहा चुम्मक की ओर खिचता है वैसे ही मेरी भी दशा है। मैं हजार कानों से तेरी बात सुनूंगा। तू देर न कर अपनी कथा मुझको सुना दे। ऐसा न हो मेरे साथी जाग उठें। और फिर हमको बातचीत का अवसर हाथ न आवे।

अब चबूतरें ने जुबान खोली: बहुत दिन हुए यहाँ से दस कोस के फासले पर एक ग्राम बसा हुआ था। वहाँ का रईस एक राजपूत था। उसके पुत्र की शादी किसी दूसरें रईस राजपूत की लड़की से ठहरी। लड़के की आयु १५ वर्ष से अधिक न रही होगी, लड़की केवल १३ साल की थी। उसकी बरात इस जगह से होकर गुजरी। पहले यहाँ न कोई वृक्ष था न कूआ था। इसलिए कोई मुसाफिर यहाँ नहीं ठहरता था। बारात गई और कई दिन के बाद शादी करके इसी जगह हो कर गुजरी जिस समय बारात घर को लौट रही थी इत्तफाक की बात उसी समय राजा का लश्कर इधर से जा रहा था! बारातियों ने उसको देख लिया और शाहाना वस्त्र पहने हुए राजपूत दूल्हे ने पालकी रुकबा ली। लश्कर के एक सिपाही से पूछा तुम क्यों और कहाँ जा रहे हो, उसने कहा राजा ने दुश्मन पर चढ़ाई की है। यहाँ से दस कोस पर मोरचा लगा है हम लोग लड़ने को जा रहे हैं। ऐसा अवसर रोज-रोज नहीं आता। बहुत सी सेना तो चली गई लड़ाई हो रही होगी हम भी जा रहे हैं अपनी बारी पर राजपूती करतब दिखावेंगे और अपना जीवन सफल करेंगे। जैसे ही इस छोटी आयु के युवक दूल्हे ने यह बात सुनी उसका जी उमंग से भर गया नेत्र अंगारे

के समान लाल हो गये उसकी दशा जोश के कारण ऐसी हो गई कि बयान से बाहर है। उसने अपने चाचा और पिता से मारवाड़ी बोली में कहा : जिस दिन के लिये राजपूतनियाँ बच्चे जनती है वह दिन आज है। राजा सँग्राम में गया है तुम मुझको आशा दो मैं भी रणभूमि में जाऊं। पिता और चाचा सच्चे राजपूत थे बोले बेटा ! तू धन्य है। तुमको रोकता कौन है। तू इस बरात का राजा है। जहां तू चलेगा हम भी वहीं चलेंगे और मौत व जिन्दगी में तेरा साथ देंगे। राजपूत की असली शादी रणक्षेत्र में होती है जहाँ तलवारों के बाजे बजते हैं। खून की पिचकारियां चलती हैं और फूलों के समान सिरों की वर्षा होती है। वह क्षत्री क्षत्री कब है जिसका दिल लड़ाई का नाम बल्लियों न उछलने लगे। चल हम दोनों भी तेरे साथ हैं और इस प्रकार राजा के नमक से बरी होंगे यदि जीवित रहे तो यश के भागी होंगे और अगर मर गये तो सीधे स्वर्ग में जाकर अप्सरायें ब्याहेंगे। पिता और चाचा की बात सुनकर सब बाराती भी कहने लगे हम भी लड़ने चलेंगे हमको फिर कभी ऐसा अवसर हाथ न आयेगा।

इस प्रकार सब लड़ने को तैयार हो गये। पिता का आयुष पाकर दूल्हा अपनी दुल्हिन के पास गया। भोली भाली जुबान में सब कथा कह सुनाई। लड़की तेरह साल से अधिक न थी मुस्कराती रही इसकी बात सुन कर बोली :—राजपूत ! तेरे माता पिता धन्य हैं। मुझको आज्ञा तो मैं भी समर में तेरे साथ चलूं उसने कहा—नहीं तू यहां ही रह। वह मान गई और अपने हाथ से पति को पान देकर कहने लगी। जाओ मुझको स्त्रियों में भाग्यवान साबित करो। लोग कहें इसका पति लड़ाका वीर है और मुझको राजपूतनियों में यश मिले।

यदि तुम संग्राम जीत कर आये तो क्या कहना। वर्ना इस जगह से मैं भी अग्नि के विमान पर तुम्हारे पीछे-पीछे आऊंगी मेरा ध्यान जी में न लाना। धर्म का विचार दिल में रखना।

"सूर चला संग्राम को कबहूं न देवे पीठ।
आगे चल पाछे फिरै ताका मुख नहीं दीठ॥

दूल्हा चलने को हुआ छोटी आयु की दुल्हिन ने उसका पाँव चूमा और फिर पालकी से निकलकर उसने उनको पान के बीड़े लगाये। और अपने सुसर सम्बन्धी, देवर, जेठ, चाचा व ताऊ सबको देकर कहा: प्राणनाथ! संग्राम को जाते हैं, आप लोग भी उनका साथ दीजिये।

छोटी आयु की लड़की और इसका अत्रीपन! सब देखकर दंग रह गये। कायर-से कायर का भी ऐसे अवसर पर साहस बढ़ जाता है। सब रणक्षेत्र को तैयार हो गये। इस प्रकार राजा को एक नई सेना मिल गई जिसका सिपहसालार वह युवक छोटी उम्र का दूल्हा राजपूत था। जिस समय यह नई पलटन राजा को निगाह के सामने से गुजरी और उसने उनका हाल सुना उसको तबियत-खुश हो गई। राजपूत ने राजा को नमस्कार किया राजा ने शाबाशी दी। और सबसे प्रथम उसी की सेना को रणक्षेत्र में जाने का सौभाग्य प्रदान किया दूल्हा के शरीर पर वह ही बाना था जो उसने शादी के समय पहना था। हाथ के कंगन भी नहीं खोले गये थे। यह लड़ने के लिए ऐसे झुके जैसे सिंह-कछार में अभय होकर विफरते हैं। एक-एक ने दस-दस और बीस-बीस को मारा और इस प्रकार लड़ करे अपनी जानें दी। नौजवान ने तेरह आदमी मारे। अन्त में उसके गहरी चोट आई। लोग उसको डेरे में उठा लाये। वह बोला मुझको रणभूमि से अलग मत होने दो। जब तक मेरी जान में जान है बराबर लड़ता रहूँगा। मेरी पगड़ी लेजा

कर मेरी स्त्री को दे देना। केवल यह ही एक उपहार है जो मैं उसकी भेंट करता हूँ। मरहमपट्टी की गई। युवक हठीला था फिर लड़ने को पहुंच गया। इस दफे भी दो-चार आदमी उसके हाथ से मारे गये। अन्त में वह भी मारा गया। इसके अपार साहस को देखकर राजा की सेना में भी एक अद्भुत जोश पैदा हो गया। उसके घोड़े से गिरते ही शत्रुओं ने लाश के टुकड़े-टुकड़े कर दिये लड़ाई जोर की हुई। अन्त में विजय राजा की हुई। बारात के आदमी करीब करीब सब ही मारे गये।

जब लड़ाई होती रही दुल्हिन सब्र सन्तोष के साथ इसी जगह बैठी रही जहां तुम मुझको देखते हो। सूर्य की धूप कड़ाके की थी। पर उसने परवाह न की। अन्त में सेना जीत कर लौटी। राजा के सैनिकों ने मृतक की पगड़ी उसे दे दी। यह तेरे शूरवीर पति की निशानी है वह स्वर्ग को गया लड़की ने प्रेम और प्यार से पगड़ी ले ली। चेहरे पर उदासी का नाम नहीं। बराबर मुस्कराती रही। राजा ने और अन्य पुरुषों ने उसे धैर्य बंधाया। पर उस पर सत सवार हो गया था। दृष्टि में क्षणभंगुर जीवन का चित्र खिंच रहा था उसने मुस्कराते हुए कहा :—

साध सती और सूमा इनका मता अगाध।
आसा छोड़ै देह की तिन में अधिका साध॥
सिर राखे सिर जात है सिर काटे सर होय।
जैसे बाती दीप की कटि उज्यारो होय॥
धड़ से सीस उताड़ दे डार देह ज्यों ठेल।
काहू सूर कीं सोहसि घर जाने का यों खेल।

सन्नाटा छा गया चारों ओर राजा की सेना ने घेरा डाल लिया। जहाँ वह बैठी थी वहाँ ही चिता तैयार की गई उसने

कई दिन से कुछ खाया पीया नहीं था पर चेहरे पर जलाल बरस रहा था। सत का तेज कुछ इस तरह प्रकाशमान था कि राजा और उसके अफसर देखकर चकित थे। वह अपने पति की पगड़ी गोद में लेकर चिता पर बैठ गई, चिता स्वयं ही भभक उठी। रीतिरस्म के अनुसार उसने लोगों को सुपारी बाँटी फिर शरीर का कुछ भाग जल गया उसका सिर लटक गया। और इस प्रकार वह श्रत्राणी जिसकी आहूति रणक्षेत्र से कहीं अधिक प्रभावशाली, अति पुनीत और अधिक शिक्षा-प्रद थी। अग्नि के विमान पर चढ़ी हुई सीधी स्वर्ग धाम का चली गई। देवताओं ने जय जयकार की शब्द ध्वनि से आकाश को गूंजा दिया। जिसने यह दृश्य देखा जीते जी वह इसे जीते जी वह इसको न भुला सका।

इस कदर किस्सा सुनाकर चबूतरे की वाणी बन्द हो गई। जैसे अधिक प्रेमअंग उमड़नें पर मनुष्य की वाणी गिड़गिड़ाने लगती है। साफ-साफ बात नहीं कह सकता यह दशा गद्‌गद् होने पर स्वाभाविक हो जाती है मेरे चित्त पर इसका गहरा प्रभाव पड़ा थोड़ी देर के बाद उसने फिर जुबान खोली दुल्हन जल गई। जब इसकी चिता ठंडी हुई। राख के दो भाग किये गये। एक तो राजा के हुक्म से गंगाजी को भेजा गया। और दूसरा इसी जगह गढ़ा है जिस पर यह चबूतरा खड़ा है। पहले कुछ दिन तक राजपूत घराने के पुरुष यहाँ आकर पूजा किया करते थे और इस सती देवी से आशीर्वाद माँगा करते थे। पूजा में चावल होते थे जिसको चुगने के लिये पक्षी आ जाया करते थे। उनमें से किसी ने बरगद के बीज बीठ कर दिये उससे यह वृक्ष स्वतः हो पैदा हो गया जिसकी आज तुम छाया मेरे ऊपर देख रहे हो। मैं इस वृक्ष में पराया हूँ।

मैंने पूछा क्या तू मुझको उस सती के पति और उस समय के आजा का नाम बता सकता है ?

वृक्ष ने कहा नाम और रूप की हविस छोड़ दे। नाम और रूप दोनों मिथ्या हैं। मैं इधर ध्यान नहीं देता। तुझको भी उचित है आज से इस ओर से अपने चित्त को हटा ले। सती के इस सत्त से शिक्षा ले। एक का हो रह दूसरे की आस छोड़। इसी में सब कुछ है। दुई में दुःख है एक में दुःख नहीं है। और मस्त होकर यह दोहे गाने लगा –

पतिब्रता को सुख घना जाके पति हैं एक।
मन मैली व्यभिचारिणी जाके खसम अनेक ॥
पतिब्रता मैली भली काली कुमल कुरूप।
पतिब्रता के रूप पर बारूं रूप सरूप ॥
नैंनों अन्तर आव तू नैन झांप तेहि लूं।
ना मैं देखूं और को ना तोय देखन दूं ॥

नाम न रटा तो क्या हुआ जो अन्तर है हेतु
पतिब्रता पति को भजै कबहूँ नाम न लेत ॥
एक नाम को जान कर दूजा दिया बहाय।
जप तप तीरथ ब्रत नहीं सतगुरु चरण समाय ॥

मुझ पर जो हालत गुजरी वह बयान से बाहर है। मैं खुशी में बेसुध होकर इस प्रकार चबूतरे के राग को सुनने लगा कि तन-बदन की सुध न रही। आखिर राह का थका हुआ था। एक ओर ठन्डी हवा चल रही थी दूसरी ओर मन को मुग्ध करने वाले राग की धुनि छिड़ी थी, चित्त स्थिर हो गया। नींद आ गई। मैं सो गया। थोड़ी देर के बाद आँख खुली। मेरे साथी अपनी दड़ियाँ लपेट रहे थे। मैंने भी दड़ी उठा ली और उनके साथ दूसरी ओर को चल दिया। चलते

समय मैंने चबूतरे को नमस्कार किया। जिसने सती के सच्चे इतिहास में मुझको सत की, अद्वैत की, सार तत्व की शिक्षा दी।

मैं अवला पीउ पीउ करूं निर्गुण मेरा पीउ।
सुन्न सनेही गुरू बिनु और न देखूं जीउ॥

—०—

हुजूर महाराज-सन्त कृपाल सिंह जी के वचनामृत

महाराज जी शासन की पंचवर्षीय योजनाओं के वार्तालाप में बहुधा वर्णन किया करते हैं कि कहीं इन्सान बनाने तथा मनुष्य बनाने की योजना है। यह काम महापुरुषों का है जो स्वयं मनुष्य होते हैं और मानवता का प्रचार करते हैं।

उनका हर काम नहीं मसल्हत से खाली होता।
क्योंकि बहरे उल्फत में, वह लगाते हैं गोता॥

उनका दया और प्रेमभाव बड़ी रक्षा करता है, मानव जाति की। बड़ा ठोस काम करता है इनका।

आज समय बदल चुका है हमें भी इसके साथ बदलना होगा। इसका यह मतलब नहीं कि हमने घर बार छोड़ देने है अथवा अपनी समाज छोड़ देनी है। समाज धन्य हैं रहो। घर बार धन्य हैं इनमें रहो। जिस कार्य के लिये मनुष्य जीवन मिला है वह काम भी करना है। वह काम दो ही हैं—एक मानवता सब एक हैं दूसरे मानव जो हैं, इसकी आगे Back-ground क्या है ? ये दो वस्तुऐं हमें जाननी हैं इसलिये महापुरुष सदैव आते रहे। समय-समय पर जिस बात की आवश्यकता रही उसी के अनुसार उसको सुलझाते रहे। आज समाज अधिक है कोई कमी नहीं। प्रत्येक समाज में शिक्षा तो Basic यही रही कि मानव जाति सब एक है। इसका

आदर्श संसार में आने का या सन्तानों में प्रेषित होने का केवल यही है कि मनुष्य, मनुष्य के काम आये।

यही है इबादत, यही दीनो इमां।
कि काम आये दुनियां में इन्सां के इन्सां ।।

मनुष्य वही है जो दूसरों के काम आता है, वरन पशु भी अपने काम आ सकता है। संसार की यात्रा सुखपूर्वक व्यतीत हो। एक दूसरे से सहानुभूति हो। साथ ही अपने आपको जाने, अपनी वास्तविकता को पहचाने, अपने जीवन आधार से परिचय हो। प्रत्येक समाज की Theoriricel and Practical क्रियात्मक शिक्षा यही रही है। जब तक अनुभवी पुरुष रहे, उनसे लाभ उठाते रहे। जब अनुभवनियों की न्यूनता हुई तो लकीर की फकीरी रह गयी तो महापुरुष आते रहते हैं। हम जिस त्रुटि उलझन में फंस जाते हैं वह फिर नवीन रूप से चेतन्ता में लाते है—कि भाइयो! क्या कर रहे हो, सचेत हो, सावधान हो, जागो, उठो और ठहरो नहीं जब तक लक्ष्य को प्राप्त न कर लो तथा परम पद पर न पहुंच जाओ। ऐसे होते हैं पूर्ण पुरुष।

आप आपको आप पिछानो। कहा और का नेक न मानो ।।
अपने आपका धारो प्रेम। तब समझोगे प्रेम का नेम ।।
अपनी समझ आप जब आये। तब परमारग गुरू लखाये ।।
अपना भला आप तुम करो। औरों के पीछे मत पड़ो ।।
अपनी आँख खुले जब भाई। तब ही गगन प्रकाश दिखाई ।।
अपनी मौत स्वर्ग का दर्शन। बाकी सब मिथ्या है भाषन ।।
आप जिये तब ही जग जीया। आप मरे पीछे क्या रहा ।।
आप आपको आप संवारो। अपनी बिगड़ी आप सुधारो ।।

तब गुरू पूरे होंय सहाई । बनत-बनत तेरी बन जाई ।।
जो नहीं समझेगा यह बानी । सो तो मूढ़ कूढ़ अज्ञानी ।।
राधास्वामी दीनदयाल । सार समझाय कर किया निहाल ।

—० —

सम्पादकीय

प्रिय पाठकगण ! जैसा कि हमने पिछले माह में आपको अवगत कराया था हम हजूर मानव दयाल जी महाराज का मासिक सन्देश इस अंक से प्रारम्भ कर रहे हैं । आशा है आगे आपको निरन्तर यह पढ़ने को मिलता रहेगा । इस मास में हम राधास्वामी योग प्रारम्भ नहीं कर पाये हैं वह अगले अंक में प्रारम्भ करेंगे कागज की बढ़ती हुई मंहगाई ने हमें पत्रिका के प्रकाशन में अनेक कठिनाई पैदा कर दी है । इसीलिए हम बार-बार अपने भाइयों से अनुरोध करते हैं कि वे अपना वार्षिक शुल्क यथा समय भेजने का कष्ट करें ।

इस माह पत्रिका के सहायतार्थ हमें हजूर महाराज ने २०००) रुपया भेजा है । तभी हम इसे प्रकाशित करने में समर्थ हो पाये हैं ।

यदि आप चाहते हैं कि 'मनुष्य बनो' मानव जाति की सेवा करते रहे एवं सन्तों के प्रवचन व अनुभवों से आपको परिचित कराता रहे तो आप हमें इसके अधिक से अधिक ग्राहक बनाते हुए समय से इसका वार्षिक मूल्य भिजवाते रहें ।

धन्यवाद !!

०

"मनुष्य बनो" (हिन्दी मासिक पत्र) समाचार पत्र (केन्द्रीय) अधिनियम १९५६ नियम ८ फार्म ४ के अनुसार अपेक्षित आवश्यक सूचना

१—प्रकाशन का स्थान		अलीगढ़
२—प्रकाशन अवधि		मासिक
३—मुद्रक का नाम		श्रीमती सुधा मीतल
क—राष्ट्रीयता		भारतीय
ख—पता		शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़।
४—प्रकाशक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ ।
५—सम्पादक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ ।
६—स्वत्वाधिकारी संरक्षक		श्रीमती सुधा मीतल परमदयाल फकीरचन्द्र जी महाराज

७—मैं सुधा मीतल घोषित करती हूं कि उपर्युक्त विवरण मेरी जानकारी और विश्वास के अनुसार सही है ।

दिनांक १५ नव०, १९८८

सुधा मित्तल

प्रकाशक के हस्ताक्षर

Regd. No. L-ALG. 28

मिलने का पता—
'मनुष्य बनो' कार्यालय
शिव भवन, लेखराज नगर,
अलीगढ़–२०२००१ (उ० प्र०)

अवैतनिक सहायक सम्पादक :
महेशचन्द्र मीतल
सम्पादक, व्यवस्थापक व प्रकाशक :
श्रीमती सुधा मीतल

ग्राहक संख्या— 170

श्रीमान् Chilwar Narsimhlu Book Seller
V & Po- Bansmade
NIZAMABAD (A.P)

मुद्रक : श्रीमती सुधा मीतल, दातादयाल प्रिंटर्स, लेखराजनगर, अलीगढ़।